वर्ष 25, अंक 11 Sr. 438, मुंबई, नवम्बर 2026, पन्ने 24 कीमत रु. 5/-

।। श्रीमद् प्रेम-रामचन्द्र-भद्रंकर-महोदय-पुण्यपाल-वज्रसेन-हेमभूषणसूरिभ्यो नमः ।।

बीसवीं सदी के महान् योगी पू. पंन्यास प्रवर श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य एवं उन्हीं के कृपापात्र चरम शिष्यरत्न जैन हिन्दी साहित्य दिवाकर पू. आचार्यदेव श्रीमद् विजय रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा. के चिंतनों को प्रसारित करने वाला मुखपत्र

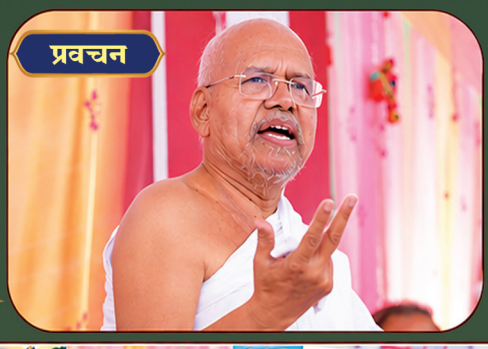
अर्हद् दिव्य-संदेश

सुवर्ण विरति स्वर्ण वर्ष २०३३-२०४३ आचार्य श्री रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.

''अर्हद् भाषितं शुद्धं, दिव्यं देवैरपि स्तुतम् । सन्देशः शोभते सम्यक्, मासिकः ज्ञानवर्धकः ।।''

संयम सुवर्ण वर्ष अनुमोदना-पिण्डवाडा दि. 24 एवं 25 अक्टूबर 2026


ज्ञानदीप प्रज्वलन


प्रवचन


पुस्तक विमोचन


पुस्तक अर्पण


अक्षत वधामणा

संपादक एवं प्रकाशक :-
सुरेन्द्र जैन, C/o. दिव्य संदेश प्रकाशन, Office No. 304, 3rd Floor,
बे व्यु बिल्डींग, विंग-ईस्ट बे, डॉ. एम.बी. वेलकर स्ट्रीट, कालबादेवी,
मुंबई-400 002. M. 84 84 84 84 51
Correspondance Whatsapp only, Website : divyasandesh.store

रत्न संदेश

लेखक :-
प्रवचन प्रभावक पूज्य आचार्यदेव श्रीमद् विजय
रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.

541

विचित्रता

आज दुकानदार मिलावट करके अधिक धन पाना चाहता है । सरकारी अधिकारी झूठे बिल बनाकर सरकार का धन अपनी तिजोरी में डालता है । आज बेईमानी कितनी व्यापक बन गई है ! सच्चा व ईमानदार व्यक्ति खोज करने पर भी नहीं मिल पाता है ।

542

पुण्य

सद्धर्म की प्राप्ति के 21 गुणों में से 19 गुण पुरुषार्थ को आभारी है, परंतु 'पंचेन्द्रिय परिपूर्णता' और 'सानुकूल परिवार' की प्राप्ति तो पुण्य को ही आभारी हैं । पाँच इन्द्रियाँ परिपूर्ण न हो तो भी धर्म आराधना बराबर नहीं कर सकते हैं और परिवार सानुकूल न हो तो भी धर्म आराधना में तकलीफ ही होती है अत: प्राथमिक भूमिका में पुण्य भी जरुरी है ।

जनवरी 2026 से दिसंबर 2026 तक दिव्यसंदेश मासिक के वार्षिक सहयोगी

मुख्य-सहयोगी

- **एक सद्गृहस्थ**-कांदिवली-बाली

सहयोगी

- **मातुश्री शांतिबेन पुखराजजी उमाजी करमाजी भंदर**-शांतिकमल-मुंबई
- **स्व. बदामीबाई चम्पालालजी राठोड़ (हस्ते राकेशभाई)** बाली, ईरोड़
- **मुनि स्थूलभद्रविजयजी** की प्रेरणा से **अ.सौ.मंजुला हसमुखलालजी महेता** मुंडारा-बोरीवली
- **ओटीबाई वालचंदजी, चाहत विनीतजी बोकरिया** विक्रोली (वे), खिमेल (राज.)

पूज्यश्री से पत्र सम्पर्क : **प.पू. आचार्य श्रीमद् विजय रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.**
C/o. कल्याणजी सौभागचंदजी जैन पेढी, प्रेमसूरि आराधना भवन, पिंडवाडा-307 022.
स्टे. पिंडवाडा (राज.) संपर्क सूत्र : सहदेव 98672 04942



5

पश्चात्ताप की भाव यात्रा

संवेदना :–
सरस्वती नंदन पू.आचार्य देव श्रीमद् विजय
रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.

दान, शील और तप के अभाव में सिर्फ भाव धर्म ही मोक्ष का कारण बन सकता है, परंतु भाव धर्म के अभाव में दान आदि स्वतंत्र अथवा संयुक्त रुप से मोक्ष का कारण नहीं बन सकते है ।

सिद्ध रस के संयोग से लोहा, सोना बन जाता है । नमक के प्रयोग से भोजन स्वादिष्ट बन जाता है, उसी प्रकार भाव धर्म के संयोग से वह धर्म मोक्ष लक्ष्मी को प्रदान करने में समर्थ बन जाता है ।

धन को पचाना कठिन है

भोजन यदि पच जाय तो शक्ति पैदा होती है और नहीं पचे हैं तो अजीर्ण होता है । बस, उसी प्रकार से धन को पचा दे तो व्यक्ति नम्र व उदार बनता है और धन को पचा नहीं पाया तो व्यक्ति अभिमानी बनता है । वह फूटबॉल की तरह वह उछलता है । धन से अभिमानी व्यक्ति गरीब का तिरस्कार व अपमान करता है ।

किसी कवि ने ठीक ही कहा हैं–

'सोए हुए कितने को जगा देती है, अच्छे अच्छे का इमान डोला देती है,
दौलत में वह गर्मी है, जो जढ जाय तो, इंसान को शैतान बना देती है ।'

शराब का नशा कुछ घंटों में उतर जाता है । यौवन का नशा बुढापे में उतर जाता है, परंतु धर्म का नशा जिंदगी भर रहता है । वह आदमी को शैतान भी बना देता है ।

कितनी ही प्यास क्यों न लगी हो, पानी पीने से कुछ घंटों के लिए वह प्यास बिल्कुल शांत हो जाती है, परंतु आश्चर्य है कि धन मिलने पर धन की प्यास और अधिक बढती है । पहले जो सौ रुपए चाहता था, वह अब हजार रुपए की इच्छा करने लग जाता है, जिसे हजार मिल गए लाख को चाहता है ।

धन में लोभान्धः अधमाधम

जगत् में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष ये चार पुरुषार्थ प्रचलित हैं, उनमें अर्थ और काम तो नाम के ही पुरुषार्थ हैं, क्योंकि अर्थ और काम आत्मा को संसार में भटकानेवाले हैं । दुर्लभ ऐसे मानव जन्म को प्राप्तकर कर मोक्ष के लक्ष्य पूर्वक एक मात्र धर्म पुरुषार्थ ही करने योग्य है ।

इसी जन्म में अथवा अल्प भवों में ही मोक्ष पाना हो तो उसके लिए **'सर्व-विरति'** धर्म की आराधना अनिवार्य है, परंतु जो आत्माएँ शारीरिक अशक्ति अथवा संसार के सुखों की आसक्ति के कारण सर्व विरति धर्म स्वीकार करने के लिए उद्यमशील नहीं बन पाई हो, उन आत्माओं के उद्धार के लिए-उन आत्माओं के क्रमिक विकास के लिए देश विरति धर्म की साधना बताई गई है। वे आत्माएँ अर्थ और काम का संपूर्ण त्याग न कर, उन पापों का आंशिक त्याग करती हैं और उन पापों की एक मर्यादा बांध देती है। श्रावक जीवन के चौथे स्वदारा संतोष व्रत में काम के ऊपर अंकुश है और पांचवें परिग्रह परिमाण व्रत में धन के ऊपर अंकुश है।

परंतु जो आत्माएँ देशविरति धर्म पाने के लिए तैयार नहीं हैं, वे कम से कम न्याय और नीति के द्वारा धन को और सदाचार के पालन द्वारा काम को अवश्य नियंत्रण में रखे।

प्राथमिक कक्षा में सद्गृहस्थ के पास जो भी धन हो वह न्याय व नीति पूर्वक का होना चाहिये।

श्रावक की भूमिका में न्याय पूर्वक का धन भी परिमित मात्रा में रखने की प्रतिज्ञा होती हैं और सर्वोच्च साधु जीवन की भूमिका में तो कुछ भी धन नहीं रखने की ही प्रतिज्ञा होती है।

इस प्रकार आत्म-विकास की तीन भूमिकाएँ हैं–

1) सर्वोच्च साधु जीवन में `धन' मात्र का सर्वथा त्याग है।

2) श्रावक जीवन की भूमिका में नीति के `धन' की भी मर्यादा है।

3) सद्गृहस्थ की प्राथमिक कक्षा में धन की छूट है किंतु वह न्याय पूर्वक का होना अनिवार्य है।

यदि आप में सामर्थ्य हो तो धन का सर्वथा त्याग कर साधु बन जाओ।

इतना मनोबल न हो तो नीति पूर्वक के धन का, परिमाण निश्चित कर दो...और इतनी भी शक्ति न हो तो अन्याय के धन का तो त्याग कर दो अर्थात् जो भी धन होगा, वह न्याय पूर्वक का ही होगा।

'अन्याय का धन मुझे नहीं चाहिये' इस दृढ प्रतिज्ञा का नाम ही धर्म की प्राथमिक भूमिका है।

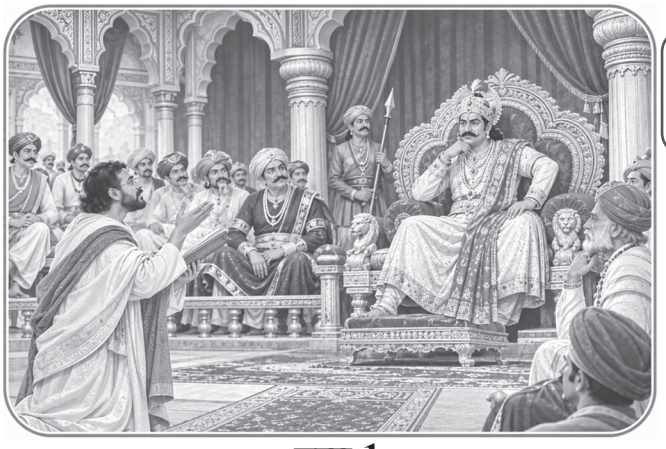
कामान्ध व्यक्ति को अधम कहा गया हैं तो

अर्थान्ध व्यक्ति को अधमाधम कहा गया है।

काम में अंध व्यक्ति को तो थोडे भी सुख का अनुभव होता हैं परंतु धन में अंध व्यक्ति को तो बिल्कुल सुख नहीं है।

अर्थान्ध व्यक्ति को **'धन'** के सिवाय कुछ दिखता ही नहीं है। **'येन केन प्रकार से धन प्राप्त करना'** यदी अर्थांध व्यक्ति का लक्ष्य होता है।

अर्थांध व्यक्ति हमेंशा संरक्षणानुबंधी रौद्र ध्यान में डूबा रहता है, उस ध्यान में आयुष्य का बंध पडे तो वह अवश्य नरक में जाता है।



दृश्य-1

सम्यग्दर्शन की ज्योत को
प्रज्वलित करने वाला एक अद्भुत नाटक

तिलक मंजूरी

-: हिन्दी संपादक :-

पू. आचार्य श्री रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.

राजा :– (मंत्री से) – मंत्रीश्वर ! आज धनपाल कवि अभी तक नही आए ?

मंत्री :– राजन् ! ऐसी भी क्या चिन्ता ? अभी आते ही होंगे ।

(धनपाल कवि आ रहे है, हाथ में पुस्तकें, ललाट पर तिलक आते ही नमस्कार की मुद्रा में) मंगल भगवान् वीरो ।

धनपाल :– जय जिनेन्द्र हो महाराज ।

राजा :– (हाथ आगे करते हुए) पधारिये, पधारिये कविराज ।

मंत्री :– कवीश्वर ! आपकी उम्र तो पूरी सौ साल है । अभी-अभी महाराजा ने याद फरमाया और आप पधार भी गये ।

राजा :– (अरे) कविराज ! अभी तक आप खड़े है । अपना आसन तो ग्रहण कीजिये न ।

धनपाल :– कोई बात नहीं ।

(राजा) :– कवीश्वर ! आज तो कोई ऐसी रचना सुनाइये कि सुनकर तबियत खुश हो जाये ।

धनपाल :– लीजिये (मंत्रीश्वर महाराज) मैं आज प्रातः ही बनाये हुए कुछ श्लोक आपके सामने प्रस्तुत करता हूँ ।

नमोऽर्हत् सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः ।।
यस्मिजीवति जीवन्ति, बहवः सोऽत्र जीवतु ।
वयांसि किं न कुर्वन्ति, चञ्चा स्वोदरपूरणम् ।।

इस श्लोक का मतलब यह है कि जिसके जीने से बहुत से जीए, उसी का जीवन सार्थक है । वैसे तो पक्षीगण भी चोंच से अनाज लेकर अपना पेट भर ही लेते है । हे राजन् ! अपने लिये जीना तो कोई बड़ी बात नहीं, औरो के लिये जीना ही सच्चा जीवन है ।

राजा :– वाह, भाई वाह ।

धनपाल :– आगे सुनिये नृपवर ।

अयं निजः परो वेत्ति, गणना लघुचेतसाम् ।
उदार चरितानां तु, वसुधैव कुटुम्बकम् ।।

हे राजन् ! यह अपना है और यह पराया है, ऐसी समझ तुच्छ मन वालों की होती है । उदारमन वालों के लिये तो सारी पृथ्वी ही कुटुंब है ।

उद्यमेन हि सिध्यन्ति, कार्याणि न मनारथैः ।
न हि सुप्तस्य सिंहस्य, प्रविशन्ति मुखे मृगाः ।।

महाराज ! इसका तात्पर्य यह है कि हर कार्य उद्यम करने से ही सिद्ध होता है, सिर्फ ऊँचे ऊँचे सपने देखने से नहीं । सोते हुए सिंह के मुख में अपने आप हिरण प्रवेश कर लेंगे ?

राजा :– शाबाश कवीश्वर ! आपका कोई जवाब नहीं । क्या आपकी वाणी है ? क्या शब्दों का जादू है ? मैं तो इसी भ्रम में पड़ गया हूँ कि कहीं आप साक्षात् बृहस्पति के अवतार तो नहीं है ? कहीं सरस्वती आपकी वाणी में तो आकर नहीं बस गयी ? अहो, क्या तारीफ करूँ आपकी ? खोजने से शब्द भी नहीं मिलते है ।

धनपाल :– अरे, बस कीजिये न, `महाराज ! मैं इस प्रशंसा के काबिल कहाँ हूँ ? यह तो देव-गुरु की कृपा और आपकी सहायता का ही फल है ।'

राजा :– नहीं कविराज ! सचमुच आपकी काव्यशक्ति प्रशंसनीय है । याद रखिये, भोज, व्यक्ति के गुणों की कदर करना जानता है । आप तो सचमुच, हमारे दरबार के एक अनमोल रत्न है ।

धनपाल :– महाराज ! फिर वही बात । आप तो मुझे आसमान पर चढ़ा देंगे ।

राजा :– हाँ कवीश्वर ! मैं आपके नाम को आसमान की बुलन्दी तक पहुँचाना चाहता हूँ । आने वाली पीढियाँ सदा आपकी कृतियों को पढ़कर आपकी अनोखी काव्य-शक्ति की प्रशंसा करेगी और कहेगी कि राजा भोज के दरबार के अनमोल रत्न कवि धनपाल की यह अमर रचना है । इसीलिये मैं चाहता हूँ कि आप परम पावन परमात्मा के स्तवन-कीर्तन से पवित्र एक ऐसी अमर रचना बनाइये कि आपकी यशोगाथा सारा जगत गाता रहे ।

धनपाल :– धन्य है महाराज ! राजा हो तो आप जैसे ! एक राजा होते हुए भी परमात्मा के प्रति इतनी भक्ति ! ऐसे तो मै स्वयं भी कई दिनों से ऐसी एक रचना बनाने की सोच रहा था, लेकिन आज आप से मिली प्रेरणा ने मुझे असीम स्फूर्ति दी है । आज से ही मैं इस शुभ-कार्य का मंगल प्रारंभ करता हूँ । और आपका सहयोग रहा, तो अति शीघ्र ही यह कार्य पूरा हो जायेगा ।

राजा :– जाइये कविराज ! मेरी शुभकामना सदा आपके साथ है । (कवि जाने लगते है, तभी राजा कहते है ।)

राजा :– और हाँ, आज से यह ग्रंथ तैयार न हो तब तक आप कृपया दरबार में आने का कष्ट मत कीजियेगा ।

धनपाल :– धन्यवाद महाराज । (कवि अत्यंत नम्रता से जा रहे है ।)

राजा :– (मंत्री से) :– देखा मंत्रीश्वर ! धनपाल कवि इतने विद्वान इतने समर्थ है लेकिन कितना विनय ! कितनी नम्रता ! ऐसे रत्नों से ही तो इस धारानगरी की शोभा दिन-दुनी, रात-चौगुनी बढ रही है ।

मंत्री :– आप ठीक ही फरमाते है महाराज !

(बैठे हुए पंडित एक-दूसरे को देखकर मुँह बिगाड़ रहे है ।)

राजा :– मंत्रीश्वर ! एक अति आवश्यक कार्य से मुझे आज रत्नपुर नगर जाना है । अतः सभा का विसर्जन किया जाए और आप जाकर प्रवास की तैयारियाँ कराइये ।

मंत्री :– जी आज्ञा ! महाराज ।

(राजा मंत्री, सिपाही आदि का गमन, पंडित अभी वहीं बैठे हैं ।)

पंडितों की बातचीत

एक :– धनपाल, धनपाल, धनपाल ! यह नाम सुन-सुनकर मेरे तो कान भी बहरे हो गये है । (अत्यंत घृणा भरे स्वर से)

दो :– (मुँह बिगाड़ते हुए) कविराज ! कवि शिरोमणि कवीश्वर । हुँह न जाने कहाँ से आकर टपक पडा है । हमें तो कोई पूछता ही नहीं ।

तीन :– हम भी कोई कम थोड़े ही है । काशी के घनश्यामजी पंडितजी से तो हमने वेद, उपनिषद्, गीता, पुराण, न्याय, तर्क सबका रट्टा लगाया है । इतने दिनों तक दिमाग चाटा, लेकिन मगच पच्ची से हाथ में क्या आया ?

एक :– और जब यह साला धनिया यहाँ पर बैठा है, बाजी उसी के हाथ में रहने वाली है । अब तो कोई ऐसी योजना बनानी पडेगी कि **'न रहेगा बाँस, न बजेगी बांसुरी ।'**

दो :– आओ, बैठकर थोड़ा दिमाग लड़ायें ।

(बैठकर सोचते है, माथे पर हाथ रखकर कोई उपाय नहीं मिलता ।)

तीन :– क्यों भाई कोई बात दिमाग में आयी ?

एक :– मेरे तो नहीं आयी (मजाकिया ढंग से)

दो :– (रोने जैसी आवाज में) मेरे भी नहीं आयी ।

तीन :– अरे, अब क्या करें ? चलो परमात्मा से ही प्रार्थना करें ।

(तीनों हाथ जोड़कर जोर से बोलते हैं)

हे प्रभु हम बालकों का, कर देना कल्याण । जल्दी-जल्दी आप निकालो, धनपा के प्राण ।।
जय जगदीश जगत के पालक, त्रिभुवन के रखवाल ।
डुबती नैया आज तिरा लो, कर दो हमें निहाल ।।

जोर से बोलते हुए जा रहे है–जय जय रामकृष्ण हरि, जय जय रामकृष्ण हरि ।।

दृश्य-2



धनपाल कवि परमात्मा को अत्यन्त भाव से नमस्कार करके स्तुति बोलते है ।

आदिमं पृथिवीनाथमादिमं निष्परिग्रहम् ।
आदिमं तीर्थनाथं च, ऋषभस्वामिनं स्तुमः ।
तुभ्यं नम–स्त्रिभुवनार्त्तिहराय नाथ !
तुभ्यं नम–क्षितितलामलभूषणाय,
तुभ्यं नम–स्त्रिजगतः परमेश्वराय,
तुभ्यं नमो जिन ! भवोदधि–शोषणाय ।।

हे त्रिभुवन के नाथ ! करुणारससिन्धु ! युगादिदेव ! आपको नमस्कार हो, नमस्कार हो, नमस्कार हो, हे प्रभु ! मैं तो एक पापी मानव हूँ, आपकी प्रभुता के आगे मेरी कविता तो एकदम तुच्छ है । आपके गुणों का वर्णन करने की शक्ति तो मुझ में है ही कहाँ ? लेकिन आज मेरे मन में उठती भक्ति की लहरें मुझे वाचाल बना रही है । अब तो मैं जी भरकर आपके गुणों का कीर्तन करुँगा ।

यद्यपि मेरी बुद्धि मन्द है, परन्तु आपके प्रभाव से मुझे आपकी स्तवना करने का सामर्थ्य प्राप्त होगा, इसी मंगल कामना के साथ मैं अपनी यह रचना प्रारम्भ करने जा रहा हूँ ।

(भक्ति से नतमस्तक हो जाता है)

(सरस्वती देवी को नमस्कार करते हुए)

शारदे नमस्तुभ्यं, वरदे ! कामरुपिणी । विद्यारंभं करिष्यामि । सिद्धिर्भवतु मे सदा ।

हे भगवती ! हे वरदे ! हे वाग्देवी ! मम सरस्वती । आपको नमस्कार हो । आज से मैं युगादिदेव प्रथम तीर्थपति श्री ऋषभदेव प्रभु की गुण स्तवना से ग्रथित (यह) नूतन ग्रंथ प्रारम्भ करने के लिये तत्पर हुआ हूँ । अतः आपसे मेरी यही प्रार्थना है कि आप मेरी जिह्वा पर बिराजमान हो जाइये और मुझे इस ग्रंथ की रचना में पूर्ण सहायता दे । हे माँ । कविजनों के आगे मैं तो एक बालक हूँ । अतः ग्रंथ की रचना में मुझसे कोई स्खलना या भूल हो जाय तो आप उस दोष को टालने की कृपा करें और मुझे शब्दों की सुन्दर रचना का सामर्थ्य प्रदान करें ।

(धनपाल ग्रंथ लिख रहे है, तभी तिलकमंजरी आती है ।)

बेटी :– पिताजी ! (पिताजी तो लिखने में व्यस्त है ।)

बेटी :– पिताजी ! इधर तो देखिये । (पिता एकदम विचारों की धारा से बाहर निकलकर देखते है) आज आपको यह क्या हो गया है ? सुबह-सुबह ही यह लेखन देखते है ।) आज आपको यह क्या हो गया है ? सुबह-सुबह ही यह लेखन कार्य लेकर बैठ गये हो । चलिय न, भोजन ठंडा हो रहा है ।

पिता :– नहीं बेटी, तू खा ले । मुझे तो भूख नहीं है ।

बेटी :– क्या कहाँ ? भूख नहीं है ? सुबह से तो आपने कुछ खाया ही नहीं और अब भी कहते है, भूख नहीं है ? कमाल है । आपकी तबीयत तो ठीक है न ?

पिता :– भला, मेरी तबियत को क्या हो सकता है ? मेरे जैसा हट्टा-कट्टा, मोटा-ताजा आदमी तो सारे हिन्दुस्तान में भी नहीं मिलेगा ! रही भोजन की बात । देख बेटी, शरीर के लिये इस भोजन की जितनी जरुरत है, उससे कही अधिक आत्मा के लिये ज्ञान रुपी भोजन की जरुरत है । शरीर सुख जायेगा तो चलेगा, परन्तु ज्ञान-भोजन के अभाव में आत्मा को भली-भाँति पोषण नहीं मिलता तो जीवन का कोई मूल्य ही नहीं रह जाता । समझी बेटी ! आज मैं आत्मा को भोजन करा रहा हूँ । जा, तू भोजन कर ले । मैं तो आज युगादिदेव प्रभु आदिनाथ की स्तुति से ही पेट भरुँगा ।

बेटी :– मैं आपको थोड़े ही मना कर रही हूँ । पहले भोजन कर लीजिये, फिर यह तो करना ही है ।

पिता :– नहीं बेटी, नहीं । आज मेरे मन में बड़ा उल्लास है । सुबह जब ध्यान में बैठा था तो अत्यन्त सुन्दर विचारों की स्फुरणा हुई थी । अब जितना जल्दी हो सके, अपनी विचार श्रृंखलाओं को शब्दों में बांधना चाहता हूँ, अन्यथा मेरी विचार धारा विस्मृत हो जायेगी ।

बेटी :– धन्य है पिताजी आपको, आपकी परमात्म-भक्ति को ! आपकी लगन को और आपके दृढ निश्चय को । अच्छा, मैं तो चली ।

(बेटी चली जाती है । पिता फिर थोडे समय तक लिखते रहते है । फिर बाहर चले जाते है ।)

(तिलक मंजरी पुस्तकें आदि समान व्यवस्थित कर रही है । अचानक पिता द्वारा लिखित पृष्ठों पर दृष्टि पड़ती है ।)

तिलक मंजरी :– मैं भी तो देखूं, पिताजी की यह नयी रचना कैसी है, जिसके लिये रात-दिन एक कर रहे है ।

(पढने लगती है)–

यः परात्मा परंज्योतिः परमः परमेष्ठिनाम् ।
आदित्यवर्णं तमसः परस्तादामनन्ति यम् ।।1।।

सर्वे येनोदमूल्यन्त, समूलाः क्लेशपादपाः ।
मूर्ध्ना यस्मै नमस्यन्ति, सुरासुरनरेश्वराः ।।2।।

वीतराग ! सपर्यातस्तवाज्ञापालनं परम् ।
आज्ञाऽऽराद्धाविराद्धा च, शिवाय स भवाय च ।।3।।

तव प्रेष्योऽस्मि दासोऽस्मि, सेवकोऽस्म्यस्मि किङ्करः ।
ओमिति प्रतिपद्यस्व, नाथ ! नातः परं ब्रुवे ।।4।।

ओ हो ! कितनी सुन्दर रचना है ? भाषा का जादू, शब्दों का लालित्य, छंदों की क्रमबद्धता, कैसा अनोखा संगम है, एक-एक पंक्ति पढ़ते हुए भक्ति की धारा बहती चली जाती है । तरणतारण ! जगत् वत्सल ! आदिदेव ! आपकी महिमा निराली है, आपके अनंत गुणों का वर्णन हम कहाँ से करे ? आपके जीवन का प्रत्येक प्रसंग हमारे लिये एक उज्ज्वल आदर्श है और आपके जीवन की प्रत्येक घटना मंगलकारी है ।

आपके गुणों की स्मृति से पवित्रित ग्रंथ भी तो ऐसा ही मंगलकारी होगा । जी करता है ये श्लोक मैं बार-बार पढ़ूँ और बस, पढ़ती ही रहूँ । जब तक इनकी एक-एक पंक्ति मेरे मानस पटल पर पंकित न हो जाय । सचमुच, यह ग्रंथ एक अमर ग्रंथ बनने वाला है । इससे पिताजी के यश का डंका दशों दिशाओं में गुंजेगा । मैं भी कितनी खुशनसीब हूं कि ऐसे गरिमामय यशस्वी पिता की सुपुत्री बनने का गौरव मुझे प्राप्त हुआ है । (श्लोक गुनगुनाती हुई चली जाती है ।)

ग्रंथ की पूर्णाहुति

(धनपाल ग्रंथ को अंतिम रुप दे रहे है, बेटी पास में ही बैठी कुछ काम कर रही है ।)

पिता :– बेटी, आज का दिन मेरे जीवन का सबसे महत्त्वपूर्ण दिन है । आज मेरी कल्पना साकार हो गयी है । मेरा वर्षों से संजोया सपना आज पूरा हो गया है । परमात्मा ऋषभदेव की मंगल कृपा से और मानों सरस्वती की कृपादृष्टि से आज मेरा यह ग्रंथ समाप्त हो गया है ।

बेटी :– सच । पिताजी आप महान् तो है ही, किन्तु यह रचना आपको अति महान् बना देगी, सफलता आपके हर कदम चूमने लगेगी ।

धनपाल :– आओ बेटी, यह ग्रन्थ आज परमात्मा को समर्पित करें । (ऋषभदेव प्रभु की तस्वीर के पास आते है ।)

हे प्रभो ! आपकी स्मृति से पावन यह ग्रंथ आज मैं आपके चरणो में सादर समर्पित करता हूँ ।

(सरस्वती देवी के पास आते है)

माँ ! आपकी कृपा से ही आज यह कार्य पूरा हो सका है, आपको मैं किस जीभ से धन्यवाद दूँ ।

(बेटी से) :– अच्छा बेटी, अब मैं राज्यसभा में जा रहा हूं, जिनकी प्रेरणा और सहायता से ही मुझे परमात्मा के गुण-गान का यह सुन्दर मौका मिला ।

बेटी :– पिताजी, मेरी शुभकामनाएं आपके साथ है ।

(पिताजी जाते है)

बेटी :– आज तो मैं लाल-लाल सुगंधी केशर और रंग-बिरंगे विविध जाति के पुष्पों से परमात्मा की सुन्दर आंगी रचाऊँगी । भक्ति में लयलीन बन जाऊँगी । जल्दी चलूं, वसंता और लतिक आती ही होगी । अरे ! आज तो लापसी भी बनानी है ।

दृश्य-3



राजा :– पधारिये कविराज ! पधारिये ! कहिये, आज कैसे पधारना हुआ, अरे, आप इतने दुबले कैसे पड़ गये है ?

धनपाल :– महाराज ! आप ही बोलते जायेंगे या मुझे भी कुछ बोलने देंगे ?

राजा :– क्यो ? कोई नया समाचार !

धनपाल :– महाराज ! आपकी प्रेरणा से प्रारम्भ किया गया ग्रंथ आज समाप्त हो गया है ।

राजा :– (राजा हर्ष से एकदम उछलकर) सच ! (धनपाल के कंधे पर हाथ रखते हुए) कविवर्य ! आपने तो कमाल कर दिया । इतने थोड़े समय में ग्रंथ पूरा हो गया ! (प्रजाजनों से) प्रजाजनों ! आज का दिन मेरे लिये बड़ी खुशी का दिन है । जाओं, धूम मचाओं, नाचों, गाओं ।

मंत्रीश्वर ! इस विशाल ग्रंथ की पूर्णाहुति एक रंगीन उत्सव के साथ एक कव्वाली मनायी जाय ।

सैनिको ! नगर भर में गुड धाणा और मिठाईयाँ बांटी जाय ।

खजांची ! सोना मोहरों के थाल भरिये ।

मंत्रीश्वर ! ढोल-नगाड़ों की धूम जरूर मचनी चाहिये ।

(सब करते हैं)- जी आज्ञा महाराज ! (सब चले जाते हैं ।

राजा :– अब सुनाइये तो सही, इस ग्रंथ की शुरुआत कैसे हुई है ?

कवि :– जी महाराज ! ग्रंथ का प्रारम्भिक भाग आपकी खिदमत में पेश है ।

पूर्णानन्दमयं महोदयमयं कैवल्य चिदृङ्मयम्,
रुपातीतमयं स्वरूपरमणं स्वाभाविकीश्रीमयम् ।
ज्ञानोद्योतमयं कृपारसमयं, स्याद्वाद-विद्यालयं,
श्री सिद्धाचलतीर्थराजमनिशं वन्देऽहमादीश्वरम् ।।

अस्मिन् जम्बूद्वीपे दक्षिणार्ध भरते विनीता नामा, जनमनरंजिनी, मदभंजिनी, भविकजननंदिनी नगरशिरोमणि, अतिसुदर्शनी नगरी अस्ति ।

तत्र च करुणाधारी, भवभयहारी, दुरितापहारी, अतुलरूप बलवीर्य धारी, परमोपकारी सकलकलापारगामी ऋषभ नामा राजा बभूव तस्य शतपुत्राणां भरतः ज्येष्ठपुत्रो बभुव । राज्यं सम्यक्रीत्या परिपालयन् बहुकालोः व्यतीतः । तदनन्तरं राज्यभारं भरताय समर्प्य स प्रवज्यामंगीकरोत् ।

उग्र साधनां कुर्वन् कैवल्यं अप्राप्नोत् । देवैः समवसरणो रचितः ।

स च ऋषभजिनः भूरिकालं प्राणिगणहिताय भूमंडले विहरन् धर्म देशनां अयच्छत् । निजायुं पूर्णं कृत्वा शिवं अचलं अरुजं अनंतं अक्षयं अव्याबाधं सिद्धिपदं अलभत् । भरतचक्रिणा अष्टापदे रत्नमंडितानि चतुर्विंशतिजिनवराणां बिंबानि संस्थापितानि ।

(राजा सुनते जाते है, उन्हें आश्चर्य के साथ हर्ष भी होता है, जिसे वे बारबार प्रकट करते रहते है । वाह-वाह आदि से)

राजा :– वाह, वाह ! कैसी सुन्दर रचना है । हे अमरग्रंथ के अमर कवि धनपाल !

आपको बधाई हो । आपके ग्रंथ में शब्दों का लालित्य है तो भाषा में प्रवीणता है, भावों का उल्लास है तो आदर्शों की सुवास भी है । कविराज ! आज मैं अपने आप को गौरवान्वित महसूस कर रहा हूँ । ग्रंथ बड़ा सुन्दर बना है, अब इसमें थोड़ा सुधार कर लीजिए ।

धनपाल :– फरमाइये महाराज !

राजा :– कवीश्वर ! आपने जहाँ पर **विनीता** नगरी लिखा है, वहाँ **धारानगरी** कर दीजिये, युगादिदेव **आदिनाथ** की जगह **महादेव,** कर दीजिये और महाराजा **भरत** के स्थान पर महाराज भोज कर दीजिये । बस, इतना सा सुधार कर दीजिये । फिर देखिये, सोने में सुगन्ध हो जायेगी ।

धनपाल :– यह आप क्या कह रहे हो महाराज ?

राजा :– मैं ठीक ही कह रहा हूँ कवीश्वर ! मैंने इस ग्रंथ को बनाने के लिये आपको इतनी सुविधा, इतनी सहूलियत इसीलिये दी थी कि जिससे सारा विश्व मेरे परम आराध्य प्रभु शिव की गुण गाथा गाये और धारानगरी के राजा भोज की भक्ति की मुक्त कंठ से प्रशंसा करे ।

धनपाल :– महाराज ! ऐसा मत कहिये ! मैं मजबूर हूं । आज से कुछ साल, पहले यही बात आपने कही होती तो मैं जरूर मान लेता, लेकिन भाई शोभनमुनि के द्वारा सत्य का ज्ञान पाने के बाद मैंने यह प्रतिज्ञा ली है कि एक वीतराग ही मेरे देव है, त्यागी पंचमहाव्रतधारी साधु ही मेरे गुरु हैं और जिनेश्वर भगवन्तों द्वारा कथित धर्म ही मेरा धर्म है । मैंने प्रभु आदिनाथ की छात्रछाया में उन्ही के प्रभाव से यह सब लिखा है, इसमें सुधार करने की कोई गुंजाइश नहीं है ।

राजा :– कविराज ! आखिर आपको आज क्या हो गया है ? आप आज इतनी बहकाने वाली बातें क्यों कर रहे है ? राजा होने के नाते मैं तो आपका भला ही सोचता हूँ । आप मेरी बात मान लीजिये, मैं आपको मुँह मांगा ईनाम दूंगा ।

धनपाल :– महाराज ! आप ईनाम देकर मुझे फुसलाना चाहते हो ?

मुझे नहीं चाहिये आपका ईनाम । ईनाम के लिये मैं अपना इमान नहीं बेच सकता । मेरे प्रभु आदिनाथ की कृपादृष्टि ही मेरे लिये सबसे बड़ा पुरस्कार है । उनकी भक्ति से बढ़कर मेरे लिये दुनिया में कोई चीज नहीं है । आप ईनाम देकर किसी और को फुसला सकते है, परमार्हत् धनपाल को नहीं !

राजा :– (एकदम आवेश में आकर) धनपाल ! होश में आओ । तुम किसके साथ बातें कर रहे हो ? तुम हद से बाहर हो रहे हो । मैं तुम्हें इतने दिनों तक इतना मान सम्मान और इज्जत क्या इसीलिये देता रहा ? अब भी संभल जाओ और मेरी बात मान लो । नहीं तो जानते हो ? धारानगरी के राजा भोज की आज्ञा का उल्लंघन अनादर करने का अंजाम क्या होगा ?

धनपाल :– (रूखे स्वर में) हाँ जानता हूँ । महाराज ! मुझे न आपकी प्रशंसा की भूख है, न आपके तुच्छ इनाम का लालच । आप तो ठहरे सिर्फ एक छोटे से राज्य के राजा । आपके नाराज होने या राजी होने से क्या फर्क पड़ता है लेकिन त्रिभुवन के नाथ प्रभु आदिनाथ की आज्ञा का उल्लंघन करूंगा तो उसका परिणाम क्या होगा, यह मैं जानता हूँ । **महाराज ! वीतराग से बढ़कर कोई राजा नहीं, उनकी आज्ञा से बढ़कर कोई आज्ञा नहीं ।**

भोज :– (आदेश भरे स्वर में) धनपाल ! यह मेरा आदेश है, तुम्हें ग्रंथ में सुधार करना ही होगा ।

धनपाल :– (एकदम जोश में) नहीं नहीं, हर्गिज नहीं । आखिर आप क्या बिगाड़ लेंगे मेरा ? बहुत हुआ तो फटकारेंगे, मारंगे । फांसी पर चढ़ा देंगे । यही न ?

इन नश्वर प्राणों की ऐसी भी क्या चिन्ता ? आखिर प्राण तो एक दिन जाने ही वाले है । तो, क्यों न वीतराग परमात्मा की बंदगी करते-करते शान से मरूं ? राजन् ! याद रखिये, मुझे अपने प्राणों से भी अपना सिद्धान्त प्यारा है, कर्तव्य प्यारा है । आप मेरे शरीर का नाश कर सकते है लेकिन अजर-अमर-अविनाशी आत्मा का नहीं ।

भोज :– इतना अभिमान ! इतना गर्व ! तुम्हें यदि अपनी विद्या पर इतना घमंड है तो तुम भी देख लो, **'मैं तुम्हारे घमंड को कैसे चकनाचूर करता हूँ ।'**

सैनिक मेजर दलपतसिंह ! इस घमंडी पंडित का यह ग्रंथ टुकड़े-टुकड़े करके जलाकर भस्म कर डालो । (सैनिक ग्रंथ खींचकर ले जाता है, धनपाल भी नीचा मुँहकर के एकदम उदास होकर चले जाते है । सैनिक उस ग्रंथ को जलती सिगडी में डाल देता है ।)

राजा :– मंत्रीश्वर मेरा सर, दर्द के मारे कटा जा रहा है ।

मंत्री :– चलिये महाराज ! इस वक्त आपको आराम की जरूरत है । (राजा और मंत्री जाते है, पंडित बैठे है ।)

पंडितों का वार्तालाप

एक :– बड़ा मजा आ गया भाई ! गौरीशंकर ।

दो :– साला, बड़ी अभिमान रखता था न ! आज सारी अकड़ बाहर निकल गयी ।

तीसरा :– बेचा...रा ! बैठकर रो रहा ।

एक :– रोए अपनी बला से । हमें क्या? आज तो हम (असली) घी के दीए जलायेंगे (असली) घी के ।

दो :– कविराज की तो हो गयी छुट्टी । अब तो राजा हमें ही पूछेंगे ।

तीन :– चलो, आज इस प्रसंग पर अपनी दावत हो जाय । कुछ घोंट ले ।

एक :– गरमागरम सुगंधी बादाम का हलवा, गरमागरम पूरी-कचोरी, बत्तीस भोजन, तैतीस पकवान, सारा माल मसाला उडायेंगे ।

दो :– अरे नाम ही गिनते रहना है क्या ? मेरे पेट में तो चूहें दौड रहे हैं ।

तीन :– हाँ चलो, चलो ।

सब हाथ में हाथ डालकर खुशी से गाते हुए जाते है ।

– जय जय जय जगदीश गोपाला
– तू है दुनिया का रखवाला
– तुमने ऐसा किया कमाल
– कि हम तो हो गये आज निहाल
– धनपालं रोए आज बिचारा

दशरथनंदन, जनमनरंजन रामचंद्र की जय
के बोलो रामचंद्र की जय....

(जोर से बोलते हुए चले जाते है ।)

दृश्य-4



तुभ्यं नमस्त्रिभुवनार्त्तिहराय

धनपाल आते ही धम्म से कुर्सी पर बैठ जाते हैं । बेटी स्तुति करके उठती है ।

बेटी :– पिताजी आपके चेहरे पर आज ये चिन्ता की रेखायें कैसी ? मैं तो पहले ही कह रही थी, लेकिन आप मेरी सुनते ही कब है ? न खाने की सुध, न पीने की सुध और न आराम की फिकर । बस, सारे दिन लिखना, लिखना, लिखना । फिर भला स्वास्थ्य न बिगडेगा तो और क्या होगा ?

पिता :– नहीं बेटी, मेरा स्वास्थ्य तो एकदम ठीक है ।

बेटी :– तो फिर ? क्या हुआ है आपको ?

पिता :– कुछ नहीं बेटी ! कुछ नहीं ।

बेटी :– पिताजी आप जरूर मुझ से कुछ छिपाने की कोशिश कर रहे है । मन की पीड़ा मन में कब तक दबायी जा सकती है ?

पिता :– मैं तुझे कैसे बताऊँ ? आज मेरी महीनों की मेहनत निष्फल हो गयी है ।

बेटी :– क्या हुआ पिताजी ? क्या राजा ने आपको इनाम नहीं दिया या ग्रंथ की प्रशंसा नहीं की ?

पिता :– प्रशंसा या इनाम न मिलते तो और बात होती । लेकिन जहाँ पर मेरे प्रभु के नाम को नीचा दिखाने की कोशिश की जाती हो, वहाँ भला मैं कैसे चुप रहूँ ? अपनी जान से भी ज्यादा मुझे अपनी आन प्यारी है । इसी आन के खातिर महाराजा ने उस ग्रंथ टुकड़े-टुकड़े कर दिये और मेरे सारे सपने मिट्टी में मिल गये ।

बेटी :– (विस्मय से) :– क्या कह रहे हो पिताजी ? कितने सुनहरे सपने संजोये थे आपने ! उस ग्रंथ पर खून-पसीना एक कर दिया था आपने ! न रात देखी, न दिन । लेकिन पिताजी, अब सोचने से क्या फायदा ? जो होना था सो हो गया । आपने जो भी किया, वह ठीक ही किया । अपनी आन के लिये, सब कुछ कुर्बान कर देने वाला मानव ही सच्चे अर्थों में परमात्मा का उपासक कहलाने के काबिल है । आपका यही समर्पण देखकर दुनिया आपको **परमार्हत् धनपाल** के नाम से जानेगी । पिताजी आप तो सृजनशील कवि है । फिर एक बार वैसा ही या उससे कही अच्छा ग्रंथ आप बना सकते है ।

पिता :– नहीं बेटी, नहीं । अब इसकी मैं तो कल्पना भी नहीं कर सकता । वह ग्रंथ जब लिख रहा था, तब परमात्मा की भक्ति मुझे प्रेरणा दे रही थी, भक्ति के उल्लास ने जादू जैसा असर करने वाले शब्दों को जन्म दिया था, अब लिखने बैठूँगा तो भी भक्ति से नहीं, बल्कि ईर्ष्या तथा द्वेष से लिखा जायेगा । बेटी, उन शब्दो में मैं प्राण कैसे फूँक सकूँगा ? उन शब्दों का कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा, बेटी, कला से भी बड़ी चीज अन्तर की भावना है । अब तो मुझे ऐसा आघात लगा है, मैं अपनी सुधबुध खो बैठा हूँ ।

बेटी :– पिताजी, आप कितनी गहराई से सोचते है । खैर, कोई बात नहीं । आप निराश मत हो, मैं आपको फिर से वह ग्रंथ सर्जन करने में सहायता दूँगी ।

पिता :– (मजाक भरे स्वर में) तू मुझे ग्रंथ बनाने में सहायता देगी, पर कैसे ?

बेटी :– पिताजी, मुझे वह ग्रंथ कंठस्थ है ।

पिता :– (आश्चर्य) तू क्या कह रही है बेटी ?

बेटी :– सच बताऊँ ? पिताजी प्रतिदिन आप लिखने के बाद जब बाहर जाते थे, तो मैं जिज्ञासावश आपके द्वारा लिखे गये पृष्टों को पढ़ती जाती थी । न जाने क्यों यह ग्रंथ मुझे इतना पसन्द आता था कि पढ़ने के बाद बारबार मैं, वे पंक्तियाँ हर वक्त मन में गुनगुनाया करती थी, जिससे मुझे वह ग्रंथ लगभग कंठस्थ है ।

पिता :– (एकदम गद्‌गद होकर)–बेटी, तू तो बाप से भी बढ़कर निकली । तू तो मेरे कुल की दीपिका है ।

बेटी :– नहीं पिताजी, यह तो युगादिदेव के आशीष, माँ शारदा की कृपा और आपके आशीर्वाद का ही फल है । मुझे प्रशंसा के झूठे बंधन में मत बांधिये । तो कीजिये, अब उस महान ग्रंथ की परम मंगल नवीन शुरुआत । मैं बोलती जाती हूँ, आप लिखते जाइये । बेटी बोलती है ।

(ग्रंथ समाप्त होने के बाद तिलकमंजरी खुश हो जाती है ।)

ग्रंथ-समाप्ति

पिता :– (ऊपर देखते हुए) :– बेटी ! तेरी बुद्धि-प्रवीणता से आज यह ग्रंथ समाप्त हुआ है । अब यह ग्रंथ किसी राजा-महाराजा के प्रदर्शन की वस्तु नहीं, परमात्मा को समर्पण करने की वस्तु है । ग्रंथ तो समाप्त हो चुका, पर इसका नामकरण अभी नहीं हुआ । बेटी ! तेरी मेहनत से ही यह ग्रंथ लिखा जा सका है, इसीलिये तेरे नाम की अमर स्मृति में इस अमर ग्रंथ का नाम **तिलकमंजरी** रखता हूँ । आने वाली पीढ़ियाँ भी याद करेंगी कि एक बेटी भी कभी बाप की प्रेरणामूर्ति बनी थी ।

दृश्य-5



राजा :– मंत्रीश्वर ! कहिये क्या हालचाल है ! राज्य का कार्य कैसे चल रहा है ?

मंत्री :– महाराज ! आपकी छत्रछाया में राज्य व्यवस्थित ढंग से चल रहा है ।

राजा :– कोई नये समाचार तो नहीं ?

मंत्री :– समाचार तो नहीं है । (कुछ सोचते हुए) हाँ महाराज ! अभी याद आया । धारानगरी में साहित्य, न्याय, व्याकरण, तर्क आदि शास्त्रों में निष्णात शिवशंकर नामक प्रकांड-विद्वान पंडित देश-विदेश भ्रमण करते हुए पधारे है । उनकी वाद शक्ति का तो कोई जवाब नहीं, अच्छे-अच्छे पंडितों की बोलती बन्द हो जाती है । अनेक पंडितों को जीतकर उन्होंने **वादी शिरोमणि** वादी मार्तण्ड आदि उपाधियां हासिल की है । हमारी ख्याति सुनकर वे यहाँ पधारे है और हमारे पंडितों से शास्त्रार्थ करना चाहते है ।

राजा :– क्यों नहीं, क्यों नहीं ! हमारे यहाँ पर पंडितों की कमी थोडे ही है ? हरिशंकर, उदयशंकर, गोरीशंकर, शिवशंकर, रविशंकर एक से एक बढ़कर पंडित है । ऐसे एक क्या दश शिवशंकर भी उग जाये तो यहाँ कोई फर्क नहीं पड़ने वाला । यह राजा भोज की सभा है । जाओ, उन्हें अभी सम्मान के साथ यहाँ ले आओ ।

(दो सिपाही जाकर पंडित को लेकर आते हैं ।)

पंडित :– (मंगल श्लोक बोलते है)

सर्वे सुखिनः सन्तु, सर्वे सन्तु निरामया ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दुःखभाग् भवेत ।।
सर्वत्र शांतिर्भवतु तुष्टिर्भवतु, पुष्टिर्भवतु ऋद्धिवृद्धिकल्याणं भवतु ।
हे राजाधिपति ! आपका कल्याण हो, कल्याण हो ।

राजा :– विराजिये पंडितवर्य ! कहिये आप हमारे पंड़ितों से किस विषय पर वाद करेंगे ?

पंडित :– महाराज अब वाद तो रहने दीजिये । मैं चार प्रश्न पूछता हूँ, जिनके जवाब मुझे चाहिये । यदि आपके दरबार के किसी विद्वान् ने इन चारों के उत्तर दे दिये तो मैं समझूँगा कि राजा भोज की जैसी कीर्ति सुनी थी, वह ठीक है ।

राजा :– (घमंड से) ठीक है, ठीक है । फरमाइये आपके सवाल ।

पंडित :– महाराज ! प्रश्न एकदम सीधे व सरल है । मेरा पहला प्रश्न है, दुनिया में ऐसा कौन है जिसे अभी दुःख है, परन्तु बाद में सुख है ।

दूसरा प्रश्न :– वह कौन है, जिसे अभी दुःख है, बाद में सुख है ।

तीसरा प्रश्न :– जो अब तो सुखी है, पर बाद में दुःखी है । और चौथा प्रश्न-जिसे अभी भी दुःख है, बाद में भी दुःख है ।

(पंडित एक-दूसरे की ओर ताकते हैं, सिर खुजलाते है ।)

राजा :– अरे, गोरीशंकर, तुम बताओ, इन प्रश्नों के उत्तर क्या हैं ? (सिर नीचे झुकाता है) अरे उदयशंकर ! हरिशंकर कोई तो बोलो । (एक बोलता है मेरा सिर दुःख रहा है, दूसरा पेट दर्द) (कोई नहीं बोलता ।)

राजा :– (गुस्से में) क्या इतने पंडितों में से एक भी ऐसा नहीं, जो इन सीधे प्रश्नों का जवाब दे सके ? क्या यही दिन देखने के लिये मैंने तुम जैसे नालायकों की भीड़ इकट्ठी की थी ? आज मेरी इज्जत पर पानी फिर जायेगा । हूँह ।

(गुस्से से देखते हैं, तभी अचानक याद करते हुए)

हाँ, आज यदि धनपाल कवि होते तो यह नौबत न आती, अभी भी तो उन्हें बुला सकता हूँ । नहीं, नहीं ! यह कैसे हो सकता है ? मैंने तो उस बेकसूर को बूरी तरह से अपमानित किया । वे इतने बड़े कवि अब यहाँ क्यों आयेंगे ? लेकिन एक बात है, धनपाल कवि चाहे जितने बड़े हो, दिल के बड़े नरम है । शायद मेरी बात मान भी लें । सिपाहियों को भेजूँ ? नहीं नहीं, एक बार तो उस महान कवि का मैंने अपमान कर डाला, फिर मैं उनसे यह आशा कैसे रखूँ ? मुझे स्वयं जाना होगा और उनसे माफी मांगनी होगी । (राजा जाने लगते है ।)

पंडित :– (घमंड से) आखिर हम जीत ही गये । आजकल के पंडितों में दम ही कहाँ रह गया है ?

राजा :– ठहरिये, पंडितजी ! ठहरिये । धारानगरी में पंडितो का अकाल नहीं पड़ा है । इस राज्य की इज्जत और गौरव सभी फीके नहीं पड़ने वाले है।

(राजा जाकर धनपाल को लेकर आते है)

धनपाल :– नमस्कार पंडितजी । महाराज से मैंने आपका परिचय प्राप्त कर ही लिया है और आपके द्वारा रखे गये प्रश्न भी जान चुका हूँ । आपकी विद्वत्ता की मैं दिलोजान से कदर करता हूँ, लेकिन आपके सरल प्रश्नों का उत्तर भी दे ही देता हूँ । (पंडित देखता है ।) तो लीजिये, आपके पहले प्रश्न का उत्तर है–निर्ग्रन्थ मुनि । मुनि को कठोर साधना से अब तो दु:ख का अनुभव होता है–लेकिन बाद में इसी साधना से उन्हें परम सुख की प्राप्ति होती है, क्यों ठीक है न ! पंडितजी (पंडितजी सिर हिलाते हैं ।)

हाँ, अब आपके दूसरे प्रश्न का उत्तर है- धर्मनिष्ठ राजा ।

धर्मनिष्ठ राजा राज्य का सुन्दर ढंग से पालन करके यहाँ पर पद आदि पाकर सुख का अनुभव करता है और बाद में भी दैविक सुखों को प्राप्त करता है ।

पंडित :– (रुखाई से) – हाँ, ठीक ही है ।

धनपाल :– पंडितजी, आपके तीसरे प्रश्न का उत्तर है–वेश्या ! जो अभी तो मौज मजा से आनंद पाती है, लेकिन बाद में नरक के भयंकर दु:खों की भागी बनती है और आपके चौथे प्रश्न का उत्तर है–चोर-डाकू । जो अब चोरी करके लोंगों की तर्जना मार-फटकार, वध-बंधन आदि कष्ट पाते है और बाद में भी नरक की यातना सहते है ।

पंडित :– एकदम ठीक । धारानगरी की कीर्ति उज्ज्वल है और उज्ज्वल ही रहने वाली है । (तभी एक व्यक्ति एकदम बुरी हालत में हाँफते-हाँफते आता है ।

व्यक्ति :– महाराज ! मैं बर्बाद हो गया, लुट गया, मैं तो कहीं का नहीं रहा । अब मैं क्या करूँ ? कहाँ जाऊँ ? (मंत्रीश्वर देखिए न इसे है क्या ?)

मंत्री :– अरे, कोई बात भी बताओगे या ऐसे ही हाय-हाय करते रहोगे ?

व्यक्ति :– महाराज ! में दीनिया हूँ, दीनिया, लाला रामनाथ का बेटा ।

महाराज ! दुनिया में कोई किसी का नहीं, अपने भी समय आने पर पराये बन जाते हैं । जब बाप भी बेटे को बुरी सीख देगा तो दुनिया में रहेगा ही क्या ?

राजा :– तुम भी कैसी बातें करते हो दीनू ? भला कोई पिता अपनी संतान का बुरा सोच सकता है ?

दीनू :– मेरे साथ तो यही हुआ है महाराज ! मेरे पिता ने मरते वक्त मुझसे कहा- बेटा, मेरे मरने के बाद मेरी इन चार सीखों का पालन करना, जीवन में सदा सुखी रहोगे ।

1) हरसाल नयी पत्नी करना ।

2) घर के आजुबाजु दांतों की बाड़ बनाना ।

3) सदा मीठा भोजन करना ।

4) धन की जरूरत आ पड़े तो गंगा का किनारा खोदना ।

ये चार बातें बताकर बापू तो ऊपर चले गये, मैं तो कहीं का नहीं रहा, महाराज, कहीं का नहीं रहा,

महाराज :– क्यों, क्या हुआ ?

दीनू :– क्या बताऊँ महाराज ! पिता की पहली सीख थी हर साल नयी पत्नी करना । मैंने यह आज्ञा सिर पर चढ़ायी । पिताजी को मरे 10 वर्ष हुए । मैंने 10 शादियाँ कीं । अब ग्यारहवीं शादी के लिये तो पैसे भी नहीं, कोई लड़की भी नहीं देता । पूरे दो दर्जन बच्चे है । इस पलटन को खाने पिलाने, पटाने-लिखाने के लिये मैंने हजारों रुपये खर्च कर दिये ।

पिताजी की दूसरी आज्ञा थी घर के आजुबाजू दाँतों की बाड करना । मैं ठहरा पिताजी का आज्ञाकारी बेटा । गाड़ी भरकर लाँखो रूपयों के हाथी दाँत मँगवाकर मकान के चारों ओर बाड़ बनायी ।

पिताजी की तीसरी सीख थी, सदा मीठा भोजन करना ।

मैंने तो पाक शास्त्र में निष्णात दो कंदोई हमेशा के लिये पास में रख लिये । घर में रोज बत्तीस भोजन, तैंतीस पकवान बनते । जिन्हें खा-खाकर मेरी पाचन शक्ति कम हो गयी है, अब तो भूख ही मर गयी है, जब मैं गरीब होने लगा तो कंदोई अवसर देखकर घर का बहुत सा सामान लेकर भाग गये । मैं रोता रह गया ।

मैं करोडपति से रोड़पति बन गया, मैं सेठ दीनानाथ से दीनू और दीनिया बन गया । मेरी सारी पत्नियाँ अपने-अपने बच्चों को लेकर मायके भाग गयी । दुनिया स्वार्थी हैं । मैं अकेला क्या करता ! पास में फुटी कोडी भी नहीं थी । तभी पिताजी की चौथी बात याद आयी ।

मैंने तो आव देखा न ताव । आखरी बाजी लगायी । एक बडी कुदाली लेकर प्रयाग से लेकर काशी तक, गंगा का किनारा खोद डाला, पर हाथ में क्या आया ? रेती और पत्थर । हाथों में तो बड़े-बड़े घाव जरूर पड़ गये थे ।

उस समय उस उल्टी सीख देने वाले बापू पर मुझे इतना गुस्सा आया, इतना गुस्सा आया कि यदि वे सामने आ जाय तो उनकी सारी खबर ले लूँ । महाराज ! यही मेरी दु:ख भरी कहानी है ।

पंडित :– कैसी उल्टी शिक्षा दी है, इसके बाप ने ।

धनपाल :– शिवशंकरजी ! आप भूल रहे है । कोई पिता अपने पुत्र को कभी बुरी सीख दे नहीं सकता । इसके पिता ने इसे जो अनमोल शिक्षा दी है, उसका पालन यदि सब लोग कर ले तो दुनिया स्वर्ग ही बन जाय ।

पंडित :– मैं कुछ समझा नहीं ।

धनपाल :– लीजियें, मैं समझाता हूँ । पहली सीख है, हर साल पत्नी नयी करना । उसका मतलब है–हर साल पत्नी को कुछ दिनों के लिये पीयर जरूर भेजना चाहिये, जिससे वह नयी-पुरानी होकर आए और आपस में प्रेम भी बना रहे ।

राजा :– यह तो बड़ी अच्छी बात है ।

धनपाल :– दूसरी सीख है–घर के आजुबाजु दाँतों की बाड़ करना ।

दुनिया में सब झगड़े बोलने से ही होते है । जीभ पर काबू किया जाय तो, सारे झगड़े टंटे ही मिट जाय (इसलिये जीभ को दाँतो की बाड़ से वश में रखो । समझे ?

दीनू :– हाँ, अब समझा ।

धनपाल :– तीसरी सीख है- सदामीठा भोजन करना । जब भूख लगी हो, तब भोजन, बड़ा मीठा लगता है । इसलिये भूख लगे, तभी भोजन करना । न कि हलवाई के पास मिठाई बनवाकर खाना ।

चौथी सीख है–जरूरत पड़ने पर गंगा का किनारा खोदना । (दीनू से) दीनू, क्या तुम्हारे घर में किसी का नाम गंगा है ?

दीनू :– अन्नदाता ! हमारे घर में जो गाय है न ! उसी का नाम गंगा है ।

धनपाल :– हाँ, अब समझा । जाकर गंगा गाय जहाँ बंधी है, वह जगह खोदो, धन मिल जायेगा । फिर पिछली तीन बातों को मानकर चलो, जीवन में कभी दुःखी नहीं बनोगें ।

दीनू :– (पावों में गिरता है) घणी खम्मा अन्नदाता, घणी खम्मा ! आज मैं सब समझ गया ।

पंडित :– कविराज ! धन्य है, आपकी विद्वत्ता को और आपकी बुद्धि को । आज से मुझे भी अपने चरणों का दास बना लीजिये । (झुकते है ।)

धनपाल :– यह आप क्या कह रहे हो ?

पंडित :– कविवर्य ! मैं आज तक गर्व के नशे में था । आज पहली बार मुझे एक सच्चे विद्वान् के दर्शन हुए है । मैं अब आपका शिष्य बनकर रहूँगा ।

राजा :– (धनपाल की पीठ थपथपाते हुए) धन्य है कविराज ! आप तो मेरे राज्य की शान है, नाक है, इज्जत है ।

आपको अपमानित करके मैंने बहुत बड़ा जुल्म किया है । आपकी वीतराग के प्रति अटूट श्रद्धा, सचमुच प्रशंसनीय है, मैं कैसा पापी हूँ कि आपके उस अलौकिक ग्रंथ को जलाकर भस्म कर डाला, जिसे आपने कितनी उमंगों से बनाया था । धिक्कार है, मुझको उस समय न जाने आपके दिल पर क्या बीती होगी, मुझे माफ कर दो कविराज ! मुझे माफ कर दो ।

धनपाल :– कैसी भूल ! कैसी माफी ! महाराज ! उन बीती बातों को भूल जाइए, उसमें आपका क्या दोष ! कसूर तो मेरे पूर्व कर्मों का था । उस ग्रंथ के लिये इतना रंज करने की कोई जरूरत नहीं है । वह ग्रंथ तो पुनः उस रूप में तैयार हो चुका है ।

राजा :– सच !

धनपाल :– जी महाराज ! मेरी स्वर्गीय पुत्री तिलकमंजरी की स्मरण शक्ति ने इस ग्रंथ को पुनर्जीवन दिया और मेरी निराशा आशा में बदल गयी । यह लीजिये । (ग्रंथ दिखाते है ।)

राजा :– (ग्रंथ को देखते हुए) :– तिलकमंजरी एक महानतम कवि की महानतम रचना, जो सदियों तक अमर रहेगी । ऐसे विद्वान् परम श्रद्धालु पिता और सरस्वती की प्रतिमूर्ति स्वरूप पुत्री पर इस राज्य को गर्व है । ऐसा राज्य तो सदा प्रगति के पथ पर ही बढ़ता जायेगा, इसमें कोई शक नहीं, परमार्हत् धनपाल की परमात्म भक्ति से हमारा सिर ऊंचा हो गया है ।

धनपाल :– बोलो युगादिदेव श्री आदिनाथ प्रभू की **जय...जय...जय**

पर्दा गिरता हैं...

मरुधर रत्न पू. आचार्यदेव श्रीमद् विजय **रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.** आदि का

आगामी कार्यक्रम

दि. 4 दिसंबर तक	**पिंडवाडा में स्थिरता**
दि. 11 से 15 दिसंबर	झाडोली (दि. 15 दिसंबर को ध्वजा एवं **पूज्य मुनिश्री पुण्यबलविजयजी म. के एकांतरे 500 आयंबिल का पारणा ।**
दि. 3 से 5 जनवरी 2027	तखतगढ में **अ.सौ. भाग्यवंतीबेन एवं शांतिलालजी का जीवित महोत्सव एवं उद्यापन ।**
दि. 16 जनवरी 2027	कांकरोली में **भरतभाई कोठारी द्वारा निर्मित श्री भद्रंकर रत्नत्रयी आराधना भवन का उद्घाटन**
दि. 23 जनवरी 2027	**शाश्वत परिवार दीपक ज्योति टॉवर निर्मित** शंखेश्वर पार्श्वनाथ जिनालय की **कांकरोली में अंजनशलाका प्रतिष्ठा**

फिर शंखेश्वर महातीर्थ की ओर विहार



शासन प्रभावना के समाचार

सरस्वती नंदन, जैन हिन्दी साहित्य दिवाकर, पूज्यपाद आचार्यदेव श्रीमद् विजय रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा. आदि ठाणा-5 एवं वर्धमान तपोनिधि साध्वी श्री धर्मज्ञाश्रीजी आदि ठाणा-2 की शुभ निश्रा में श्री पिण्डवाडा जैन संघ में चातुर्मासिक आराधना हो रही है ।

दि. 27 सितंबर से नौ दिवसीय नवकार महामंत्र की आराधना एवं एकासना तप प्रारंभ हुआ । प्रतिदिन 9.45 बजे से पूज्यश्री के नवकार महामंत्र की महिमा बताते हुए प्रेरणादायी प्रवचन हुए ।

दि. 8 अक्टूबर को दीर्घ संयमी, संघ स्थविर पूज्यपाद आचार्यदेव श्रीमद् विजय सिद्धिसूरीश्वरजी म.सा. की 67 वीं स्वर्गारोहण पुण्यतिथि निमित्त प्रात: 9.45 बजे गुणानुवाद सभा का आयोजन हुआ । पूज्यश्री ने उनके जीवन की अनेक बातें बताई । अंत में 50 रुपये की सामुहिक प्रभावना हुई । पूज्यश्री को श्रद्धांजलि अर्पण करने हेतु 70 आराधकों ने आयंबिल तप किया । संघ की ओर से उन्हें 100 रुपये की प्रभावना की गई ।

दि. 9 अक्टूबर को वात्सल्य वारिधि पूज्यपाद आचार्यदेव श्रीमद् विजय महाबलसूरीश्वरजी म.सा. की 10 वीं स्वर्गारोहण पुण्यतिथि निमित्त गुणानुवाद सभा का आयोजन हुआ ।

दि. 12 अक्टूबर को मेवाड देशोद्धारक पूज्यपाद आचार्यदेव श्रीमद् विजय जितेन्द्रसूरीश्वरजी म.सा. की 21 वीं स्वर्गारोहण पुण्यतिथि निमित्त गुणानुवाद सभा एवं सामुहिक आयंबिल तप का आयोजन हुआ ।

आसोज मास की शाश्वती नवपद ओली

श्री पिण्डवाडा जैन संघ के आदेश से मातुश्री सविताबेन जयंतिलालजी छोटालालजी परिवार की ओर से आसोज् मास की शाश्वती नवपद ओली का सुंदर आयोजन किया गया । उनके आमंत्रण को प्राप्त कर सुरत-मुंबई अहमदावाद आदि क्षेत्रों में रहे पिण्डवाडावासी नवपद ओली की आराधना करने पधारे । दि. 17 अक्टूबर से प्रवचन दरम्यान पूज्य आचार्यदेव श्रीमद् विजय रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा. के नवपद की महिमा एवं मु. श्री स्थूलभद्रविजयजी के श्रीपाल महाराजा के जीवन पर प्रेरणादायी प्रवचन प्रारंभ हुए ।

दि. 18 अक्टूबर से नवपद ओली का मंगल शुभारंभ हुआ । प्रतिदिन प्रात: 6.00 बजे मंदिरजी में सामुहकि देववंदन एवं विविध स्तोत्र भक्ति हुई । फिर 9.45 बजे से प्रेरणादायी प्रवचन हुए । दोपहर 11.30 बजे मेहता वाडी में आयोजक परिवार ने मेहता वाडी में तपस्विओं की आयंबिल तप में खूब सुन्दर भक्ति की । दोपहर 3.00 बजे पूज्य सा. श्री धर्मज्ञाश्रीजी की शुभ निश्रा में श्राविकाओं के लिए श्रीपालरास पर प्रवचन हुए । शाम को मंदिरजी में सामुहिक चैत्यवंदन एवं संध्या भक्ति हुई । सभी प्रसंगों में आयोजक परिवार की ओर से प्रभावना की गई ।

त्रिदिवसीय रत्नत्रयी भक्ति महोत्सव

दि. 24 अक्टूबर से मरुधर रत्न पूज्य आ. श्री रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा. के **सर्वविरति सुवर्ण वर्ष की अनुमोदनार्थ** एवं माताजी सविताबेन तथा पिताजी जयंतिलालजी छोटालालजी के आत्मश्रेयार्थ त्रिदिवसीय रत्नत्रयी भक्ति महोत्सव का शुभारंभ हुआ ।

आज ज्ञानपद की आराधना निमित्त प्रात: 9.15 बजे **साहित्य संवेदना** के कार्यक्रम के साथ पूज्यश्री द्वारा हिन्दी में आलिखित 280 वीं पुस्तक **'बिन्दु में सिन्धु'** के भव्य विमोचन का कार्यक्रम हुआ । प्रारंभ में अशोकभाई महेता, सुरेशकुमार मिलापचंदजी, मनीषजी जैन आदि ने ज्ञान दीपक प्रकट किया । आयोजक परिवार से हरेशभाई जयंतिलालजी ने पूज्य गुरुदेव पूज्य पंन्यास प्रवर श्री भद्रंकरविजयजी की गुरु प्रतिमा पर पुष्पमालार्पण किया ।

आहोर से पधारे एन्कर दिनेशभाई शर्मा ने अपने जोशिले अंदाज में पूज्यश्री की साहित्य यात्रा एवं वैराग्य प्राप्ति के प्रसंगों का खूब सुंदर वर्णन किया । पुस्तक का विमोचन हरेशभाई, कुंदनमलजी, रणजीतभाई, महेन्द्रभाई, भरतभाई, राजेन्द्रभाई, दीपकभाई, आशीष, अमीष और मोक्षकुमार ने **'बिंदू में सिंधु'** का विमोचन कर पूज्यश्री को पुस्तक अर्पित की । संघ ने पुस्तकों को अक्षत से वधाया ।

इस अवसर पर विशेष रुप से पूज्यश्री द्वारा आलिखित पुस्तकों की प्रदर्शनी की गई । कार्यक्रम लगभग 11.30 बजे तक चला । कार्यक्रम के बाद 50 रुपये की प्रभावना हुई । दोपहर 3.30 बजे पूज्यश्री का ज्ञान पद की महिमा पर प्रेरणादायी प्रवचन हुआ ।

दि. 25 अक्टूबर को चारित्र पद की आराधना निमित्त प्रात: 9.15 बजे पूज्य आचार्य भगवंत के 50 वर्ष एवं पूज्य साध्वी श्री धर्मज्ञाश्रीजी के 49 वर्ष के संयम जीवन की हार्दिक अनुमोदनार्थ **संयम संवेदना** का कार्यक्रम हुआ । सुरत से पधारे धरणेन्द्रभाई गांधी ने भाववाही संवेदना प्रस्तुत की । संगीतकार संयम जैन ने मधुर संगीत से सभा को भाव विभोर किया । पूज्यश्री ने चारित्र पद की प्राप्ति के मनोरथ पर खूब सुंदर प्रेरणा दी ।

अंत में आयोजक परिवार ने पूज्यश्री एवं साध्वीजी को अक्षत से वधामणा कर शुभकामना व्यक्त की । कांकरोली जैन संघ ने सभा को आराधना भवन उद्घाटन एवं जिनालय प्रतिष्ठा प्रसंग पर पधारने हेतु हार्दिक आमंत्रण दिया । कार्यक्रम के बाद 50 रुपये की सामुहिक प्रभावना हुई । रात्रि में 8.00 बजे नूतन धर्मशाला में भक्ति भावना हुई ।

दि. 26 अक्टूबर को तप पद की आराधना निमित्त प्रात: 9.30 बजे **तप और तपस्वी वंदना** का भक्ति संगीतमय कार्यक्रम हुआ । संयमभाई ने भाववाही संगीत प्रस्तुत किया । पूज्यश्री ने नैमित्तिक तप के साथ-साथ नित्य तप में जुडे रहने की विशेष प्रेरणा दी । अंत में श्री पिण्डवाडा जैन संघ की ओर से नवपद ओली आयोजक परिवार का बहुमान किया गया ।

दोपहर 12.39 बजे मंदिरजी सिद्धचक्र महापूजन एवं शाम 6.00 बजे भव्य महापूजा एवं महा आरती का आयोजन हुआ ।

दि. 27 अक्टूबर को प्रात: 6.30 बजे गाजते-बाजते श्री संघ के साथ पूज्यश्री के पगले हरेशभाई के गृहांगण में हुए । पूज्यश्री ने अणाहारी पद प्राप्ति के लिए प्रेरणादायी प्रवचन दिया । फिर 7.30 बजे मेहता वाडी में नवपद ओली में जुडे 170 आराधकों के पारणे हुए । आयोजक परिवार एवं सामुहिक प्रभावना फंड में से 2,100 रुपये की प्रभावना की गई ।

दोपहर 12.00 बजे मेहता वाडी में सकल संघ का स्वामीवात्सल्य हुआ ।

RNI No. MAHHIN/2000/00860 • Postal Reg. No. MCS/125/2024-26 • WPP License No. MR/TECH/WPP-285/South/2024-26
Posted at Patrika Channel STG Office Mumbai-1 • Date of Pub. 12 Day of every month • Posting Date 15th of every month

॥ श्री शंखेश्वर पार्श्वनाथाय नमः ॥

॥ श्रीमद् प्रेम-रामचंद्र-भद्रंकर-महोदय-पुण्यपाल-वज्रसेन-हेमभूषणसूरिभ्यो नमः ॥

शंखेश्वर महातीर्थ की धन्यधरा पर

यात्रिक भवन में

सूरि रामचन्द्र-भद्रंकर शिशु

मरुधर रत्न, जैन हिन्दी साहित्य दिवाकर, सरस्वती नंदन पूज्य आचार्यदेव

श्रीमद् विजय रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा. के

संयम सुवर्ण वर्ष की मंगलमय पूर्णाहूति की अनुमोदनार्थ

सामूहिक अट्ठम के साथ

–: शुभ निश्रा :–

प्रवचन प्रभावक पू.आ. श्री रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा. आदि साधु-साध्वीवृंद

दो दिवसीय विशेष-कार्यक्रम

दि. 6-3-2027 शनि

प्रातः 9.30 बजे 'पूज्यश्री की साहित्य साधना-संवेदना'
पूज्य आचार्य श्री के संयम जीवन 'संयम सुवर्ण यात्रा' पुस्तक एवं
पूज्यश्री द्वारा हिन्दी भाषा में अनुदित 284, 285 तथा 286वीं पुस्तक
'लोक प्रकाश-भाग-1, 2, 3 का भव्य विमोचन'

संवेदना - मोंटुभाई सुरत

भक्ति संगीत : मीत शाह • शाम को दादा के दरबार में संध्या भक्ति व 108 दीप की आरती

दि. 7-3-2027 रवि

प्रातः 9.30 बजे संयम सुवर्ण वर्ष संवेदना

संवेदना हेतु चेतनभाई भायंदर • भक्ति संगीत-मीत शाह

आगंतुक गुरु भक्त महेमान अपने आगमन की अग्रीम सूचना
दि. 31 दिसंबर 2026 तक अपना नाम पत्ता व आधार कार्ड की Zerox के
साथ अवश्य सूचित करावे ।

Contact No.

1. ललितभाई तोगाणी 93243 37325
2. नरेशभाई तोगाणी 93243 93886 3. साहिल तोगाणी 90821 57605

निमंत्रक

स्व. मातुश्री सुमटीबाई तोलचंदजी तोगाणी, स्व. मातुश्री हुलासीबाई बाबुलालजी तोगाणी,
गुडा बालोतान-हाल कमलकुंज-लालबाग-मुंबई-400 012.

If undelivered please return to : DIVYA SANDESH PRAKASHAN
Office No.304, 3rd floor, Bay Vue Building, Wing--East Bay,
Dr.M.B.Velkar Street,Kalbadevi, Mumbai-400002.

To,

From :

Published and Printed by : SURENDRA JAIN on behalf of
DIVYA SANDESH PRAKASHAN
Printed at : SOMANI PRINTING PRESS, Gala No. 3-4,
Amin Ind. Estate, Sonawal Cross Road No. 2, Goregaon (E),
Mumbai-400 063. and Published from : Office No.304, 3rd floor,
Bay Vue Building, Wing--East Bay, Dr.M.B.Velkar
Street,Kalbadevi, Mumbai-400002. EDITOR:SURENDRA JAIN